समकालीन विश्व व्यवस्था में भू–राजनीतिक संघर्ष और सुरक्षा चुनौतियाँ

रेनू

सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान विभाग, आर.डी.एस. कॉलेज, रेवाड़ी।

सारांश

वर्तमान विश्व–व्यवस्था तीव्र भू–राजनीतिक परिवर्तन के दौर से गुजर रही है। शीतयुद्ध की समाप्ति के बाद लंबे समय तक अमेरिका और पश्चिमी देशों के प्रभाव वाली एकध्रुवीय व्यवस्था प्रमुख रही, परंतु अब यह व्यवस्था धीरे–धीरे बहुध्रुवीय रूप ग्रहण कर रही है। चीन की आर्थिक और सैन्य शक्ति, रूस की सक्रिय सामरिक नीति, भारत की बढ़ती वैश्विक भूमिका, ब्रिक्स का विस्तार और वैश्विक दक्षिण की राजनीतिक सक्रियता ने अंतरराष्ट्रीय शक्ति–संतुलन को बदल दिया है। इस परिवर्तन ने विश्व–राजनीति को अधिक जटिल, प्रतिस्पर्धात्मक और अस्थिर बना दिया है। समकालीन युद्धों ने वैश्विक सुरक्षा की पारंपरिक अवधारणा को भी बदल दिया है। रूस–यूक्रेन युद्ध ने यूरोप की सुरक्षा व्यवस्था, ऊर्जा आपूर्ति, खाद्य बाजार और नाटो की भूमिका को प्रभावित किया है। इसी प्रकार इजराइल–फिलिस्तीन संघर्ष ने मानव–सुरक्षा, अंतरराष्ट्रीय कानून और मानवीय सहायता से जुड़े प्रश्नों को गंभीर बना दिया है। दक्षिण चीन सागर में तनाव, ताइवान प्रश्न, ईरान का परमाणु कार्यक्रम और अमेरिका–चीन प्रतिस्पर्धा यह स्पष्ट करते हैं कि वर्तमान सुरक्षा संकट केवल क्षेत्रीय नहीं, बल्कि वैश्विक प्रभाव रखने वाले हैं। आज सुरक्षा केवल सीमाओं की रक्षा, सेना और हथियारों तक सीमित नहीं रही है। ऊर्जा–सुरक्षा, खाद्य–सुरक्षा, समुद्री मार्गों की सुरक्षा, साइबर–सुरक्षा, तकनीकी नियंत्रण, आर्थिक प्रतिबंध, आपूर्ति–श्रृंखला और परमाणु अप्रसार भी सुरक्षा के महत्त्वपूर्ण आयाम बन चुके हैं। परमाणु हथियारों का आधुनिकीकरण और अप्रसार व्यवस्था की सीमाएँ वैश्विक शांति के लिए गंभीर चुनौती प्रस्तुत करती हैं। इस शोध–पत्र में समकालीन युद्धों, बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था और परमाणु अप्रसार की चुनौतियों का अध्ययन किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि विश्व–राजनीति में शक्ति–संतुलन बदल रहा है, लेकिन संयुक्त राष्ट्र और अन्य अंतरराष्ट्रीय संस्थाएँ इन नई चुनौतियों का प्रभावी समाधान प्रस्तुत करने में अभी पूर्णतः सक्षम नहीं हैं। इसलिए न्यायपूर्ण बहुपक्षीय सहयोग, संवाद, संस्थागत सुधार और परमाणु नियंत्रण वर्तमान समय की अनिवार्य आवश्यकता हैं।

मुख्य शब्दः वैश्विक भू–राजनीति, समकालीन युद्ध, बहुध्रुवीयता, परमाणु अप्रसार, वैश्विक सुरक्षा, ब्रिक्स, नाटो, संयुक्त राष्ट्र।

प्रस्तावना

वैश्विक भू–राजनीति वर्तमान अंतरराष्ट्रीय संबंधों को समझने की एक महत्त्वपूर्ण अवधारणा है। इसका अर्थ केवल विभिन्न देशों के आपसी राजनीतिक संबंधों का अध्ययन करना नहीं है, बल्कि यह समझना भी है कि भौगोलिक स्थिति, प्राकृतिक संसाधन, सैन्य शक्ति, तकनीकी क्षमता, समुद्री मार्ग, विचारधारा, आर्थिक हित और कूटनीतिक गठबंधन किस प्रकार

विश्व–राजनीति को प्रभावित करते हैं। किसी भी देश की शक्ति केवल उसकी सेना या अर्थव्यवस्था से निर्धारित नहीं होती, बल्कि उसकी भौगोलिक स्थिति, समुद्री पहुँच, ऊर्जा–स्रोतों पर नियंत्रण, तकनीकी विकास और वैश्विक संस्थाओं में प्रभाव से भी निर्धारित होती है। इसी कारण भू–राजनीति आज अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा, विदेश नीति और वैश्विक शक्ति–संतुलन के अध्ययन का केंद्रीय विषय बन चुकी है।

बीसवीं शताब्दी में शीतयुद्ध के दौरान विश्व मुख्यतः दो शक्ति–गुटों में विभाजित था। एक ओर अमेरिका के नेतृत्व वाला पूँजीवादी और पश्चिमी गुट था, जबकि दूसरी ओर सोवियत संघ के नेतृत्व वाला समाजवादी गुट था। उस समय अंतरराष्ट्रीय राजनीति का केंद्र सैन्य गठबंधनों, परमाणु हथियारों की होड़, वैचारिक संघर्ष और शक्ति–संतुलन पर आधारित था। 1991 में सोवियत संघ के विघटन के बाद अमेरिका विश्व की प्रमुख शक्ति के रूप में उभरा और एकध्रुवीय विश्व व्यवस्था का विकास हुआ। इस व्यवस्था में अमेरिका और पश्चिमी संस्थाओं का प्रभाव अंतरराष्ट्रीय राजनीति, अर्थव्यवस्था और सुरक्षा व्यवस्था पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता था।

परंतु इक्कीसवीं सदी के तीसरे दशक तक आते–आते यह एकध्रुवीय व्यवस्था कमजोर पड़ती दिखाई देती है। चीन का तीव्र आर्थिक और सैन्य उभार, रूस की सक्रिय सामरिक नीति, भारत की बढ़ती रणनीतिक भूमिका, ब्रिक्स का विस्तार, वैश्विक दक्षिण की राजनीतिक चेतना और क्षेत्रीय शक्तियों की सक्रियता ने विश्व–राजनीति को बहुध्रुवीय दिशा में आगे बढ़ाया है। अब अंतरराष्ट्रीय शक्ति केवल एक देश या एक गुट तक सीमित नहीं रह गई है, बल्कि अनेक शक्ति–केंद्रों में विभाजित होती जा रही है। यह परिवर्तन विश्व–व्यवस्था को अधिक जटिल, प्रतिस्पर्धात्मक और अस्थिर बनाता है।

वर्तमान समय में भू–राजनीति का स्वरूप अधिक आक्रामक और बहुस्तरीय हो गया है। युद्ध अब केवल सीमाओं और रणभूमि तक सीमित नहीं रहते, बल्कि उनका प्रभाव ऊर्जा आपूर्ति, खाद्यान्न व्यापार, वित्तीय व्यवस्था, साइबर सुरक्षा, समुद्री मार्गों, तकनीकी नियंत्रण और सूचना–प्रणाली तक फैल जाता है। रूस–यूक्रेन युद्ध ने यह स्पष्ट कर दिया है कि एक क्षेत्रीय युद्ध भी वैश्विक अर्थव्यवस्था, ऊर्जा बाजार और खाद्य सुरक्षा को प्रभावित कर सकता है। इसी प्रकार इजराइल–फिलिस्तीन संघर्ष, दक्षिण चीन सागर में तनाव, ईरान–परमाणु विवाद और अमेरिका–चीन प्रतिस्पर्धा वैश्विक सुरक्षा के व्यापक प्रश्न बन चुके हैं।

आज सुरक्षा की अवधारणा केवल सैनिक शक्ति तक सीमित नहीं है। साइबर हमले, आर्थिक प्रतिबंध, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, सूचना–युद्ध, परमाणु हथियारों का आधुनिकीकरण और आपूर्ति–श्रृंखला पर नियंत्रण भी सुरक्षा के नए आयाम बन गए हैं। एसआईपीआरआई के अनुसार वर्ष 2025 में विश्व सैन्य व्यय 2887 अरब डॉलर तक पहुँच गया, जो 2024 की तुलना में 2.9 प्रतिशत अधिक था। यह तथ्य स्पष्ट करता है कि विश्व में सैन्यीकरण, अविश्वास और सुरक्षा–चिंता लगातार बढ़ रही है। इसलिए वैश्विक भू–राजनीति और सुरक्षा का अध्ययन वर्तमान समय में अत्यंत आवश्यक हो गया है, क्योंकि इससे बदलती विश्व–व्यवस्था, समकालीन युद्धों और अंतरराष्ट्रीय शक्ति–संतुलन को गहराई से समझा जा सकता है।

वैश्विक भू–राजनीति की वैचारिक पृष्ठभूमि

अंतरराष्ट्रीय संबंधों के यथार्थवादी सिद्धांत के अनुसार राष्ट्र अपनी सुरक्षा और शक्ति–वृद्धि को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हैं। केनेथ वाल्ट्ज ने अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था को अराजक माना, जहाँ कोई केंद्रीय विश्व–सरकार नहीं होती और प्रत्येक राज्य को अपनी सुरक्षा स्वयं सुनिश्चित करनी पड़ती है। जॉन जे. मियरशाइमर के अनुसार महान शक्तियाँ केवल सुरक्षा की रक्षा नहीं करतीं, बल्कि क्षेत्रीय और वैश्विक प्रभाव बढ़ाने का प्रयास भी करती हैं, इसी से शक्ति–संघर्ष जन्म लेता है। यही दृष्टि आज अमेरिका–चीन प्रतिस्पर्धा, रूस–पश्चिम संघर्ष और इंडो–पैसिफिक क्षेत्र में शक्ति–संतुलन की राजनीति को समझने में सहायक है।

दूसरी ओर उदारवादी दृष्टिकोण मानता है कि अंतरराष्ट्रीय संस्थाएँ, आर्थिक परस्पर निर्भरता और अंतरराष्ट्रीय कानून युद्ध की संभावना को कम कर सकते हैं। रॉबर्ट केओहेन और जोसेफ नाई ने "complex interdependence" की अवधारणा दी, जिसके अनुसार आधुनिक विश्व में राष्ट्र केवल सैन्य शक्ति से नहीं, बल्कि व्यापार, संस्थाओं, वित्त, ऊर्जा और तकनीक के माध्यम से भी जुड़े होते हैं। परंतु समकालीन युद्धों ने यह भी दिखाया है कि आर्थिक परस्पर निर्भरता संघर्ष को रोकने की गारंटी नहीं देती। रूस और यूरोप के बीच ऊर्जा–निर्भरता होने के बावजूद यूक्रेन युद्ध हुआ और अमेरिका–चीन व्यापार संबंधों के बावजूद दोनों के बीच रणनीतिक प्रतिस्पर्धा बढ़ी।

समकालीन युद्धों की बदलती प्रकृति

समकालीन युद्ध पारंपरिक युद्धों से अलग हैं। पहले युद्ध मुख्यतः दो सेनाओं के बीच सीमित क्षेत्र में लड़े जाते थे, लेकिन अब युद्धों का प्रभाव नागरिक जीवन, अंतरराष्ट्रीय बाजार, ऊर्जा–स्रोतों, खाद्यान्न आपूर्ति, डिजिटल संरचना और वैश्विक वित्तीय प्रणाली तक फैल जाता है। रूस–यूक्रेन युद्ध ने यह स्पष्ट किया कि एक क्षेत्रीय युद्ध भी विश्व–व्यवस्था को प्रभावित कर सकता है। इस युद्ध ने नाटो की भूमिका को पुनर्जीवित किया, यूरोप की ऊर्जा–सुरक्षा को चुनौती दी, वैश्विक खाद्य कीमतों को प्रभावित किया और रूस–पश्चिम संबंधों को शीतयुद्ध जैसी प्रतिस्पर्धा की ओर धकेला। एक शोध–लेख के अनुसार यूक्रेन युद्ध और रूस पर लगाए गए प्रतिबंधों के प्रभाव से 2022 की पहली छमाही में वैश्विक खाद्य, ईंधन और उर्वरक कीमतों में तीव्र वृद्धि हुई थी।

रूस–यूक्रेन युद्ध की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें ड्रोन, उपग्रह, साइबर तकनीक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, मिसाइल रक्षा और सूचना–युद्ध का व्यापक उपयोग हुआ। युद्ध अब केवल भौतिक क्षेत्र में नहीं, बल्कि डिजिटल क्षेत्र में भी चल रहा है। साइबर हमले बैंकिंग, बिजली, संचार और सरकारी नेटवर्क को निशाना बना सकते हैं। इससे नागरिक जीवन सीधे प्रभावित होता है। इसी प्रकार सोशल मीडिया और प्रचार–तंत्र के माध्यम से जनमत को प्रभावित करने की रणनीति भी युद्ध का हिस्सा बन चुकी है।

इजराइल–फिलिस्तीन संघर्ष ने मानव–सुरक्षा की अवधारणा को फिर से केंद्र में ला दिया है। गाजा संकट में नागरिक हानि, विस्थापन, स्वास्थ्य–संकट और मानवीय सहायता की कठिनाइयों ने अंतरराष्ट्रीय कानून और संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था की सीमाओं को उजागर किया। ओसीएचए

की जून 2026 की रिपोर्ट में गाजा स्वास्थ्य मंत्रालय के हवाले से युद्धविराम की घोषणा के बाद भी मृतकों और घायलों की संख्या दर्ज की गई, जिससे स्पष्ट होता है कि युद्धविराम के बाद भी मानवीय संकट पूरी तरह समाप्त नहीं होता।

वैश्विक सैन्यीकरण की प्रवृत्ति

वैश्विक सैन्यीकरण की प्रवृत्ति से यह स्पष्ट होता है कि वर्तमान विश्व–व्यवस्था में सुरक्षा को लेकर देशों की चिंता लगातार बढ़ रही है। समकालीन युद्धों, क्षेत्रीय तनावों, महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा, परमाणु हथियारों के आधुनिकीकरण और नई तकनीकी चुनौतियों के कारण अनेक देश अपने रक्षा–बजट में वृद्धि कर रहे हैं। स्टॉकहोम अंतरराष्ट्रीय शांति अनुसंधान संस्थान के अनुसार वर्ष 2025 में विश्व सैन्य व्यय 2887 अरब डॉलर तक पहुँच गया, जो वर्ष 2024 की तुलना में वास्तविक रूप से 2.9 प्रतिशत अधिक था। यह स्थिति बताती है कि विश्व में सैन्य खर्च केवल किसी एक युद्ध या क्षेत्रीय संकट के कारण नहीं बढ़ रहा, बल्कि यह लंबे समय से चल रही व्यापक प्रवृत्ति बन चुका है।

तालिका 1: *वैश्विक सैन्य व्यय के प्रमुख संकेतक, 2025*

क्रम	संकेतक	मूल्य
1	कुल विश्व सैन्य व्यय	2887 अरब डॉलर
2	2024 की तुलना में वास्तविक वृद्धि	2.90%
3	वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद में सैन्य व्यय का हिस्सा	2.50%
4	2016–2025 के दशक में कुल वृद्धि	41%
5	वृद्धि का क्रम	लगातार 11वाँ वर्ष

स्रोतः स्टॉकहोम अंतरराष्ट्रीय शांति अनुसंधान संस्थान, विश्व सैन्य व्यय की प्रवृत्तियाँ, 2025

इस तालिका से स्पष्ट होता है कि वर्तमान समय में विश्व के देश अपनी सुरक्षा–व्यवस्था को अधिक मजबूत करने के लिए रक्षा क्षेत्र पर अधिक धन खर्च कर रहे हैं। वर्ष 2016 से 2025 तक सैन्य व्यय में 41 प्रतिशत की वृद्धि यह सिद्ध करती है कि सैन्यीकरण एक दीर्घकालीन वैश्विक प्रवृत्ति बन गया है। इसका संबंध रूस–यूक्रेन युद्ध, यूरोप में सुरक्षा–संकट, एशिया–प्रशांत क्षेत्र में अमेरिका–चीन प्रतिस्पर्धा, पश्चिम एशिया की अस्थिरता और आधुनिक हथियार प्रणालियों के विकास से जोड़ा जा सकता है।

वैश्विक सकल घरेलू उत्पाद का 2.5 प्रतिशत सैन्य व्यय पर खर्च होना यह दिखाता है कि विश्व के संसाधनों का बड़ा भाग रक्षा और हथियारों पर लगाया जा रहा है। इससे देशों की सुरक्षा क्षमता तो बढ़ती है, परंतु शिक्षा, स्वास्थ्य, जलवायु परिवर्तन, गरीबी–उन्मूलन और सतत् विकास जैसे क्षेत्रों पर संसाधनों का दबाव भी बढ़ता है। इसलिए सैन्यीकरण केवल सुरक्षा का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह विकास, शांति और अंतरराष्ट्रीय सहयोग से भी जुड़ा हुआ विषय है। इस प्रकार तालिका यह स्पष्ट करती है कि बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था में शक्ति–संतुलन की प्रतिस्पर्धा ने सैन्य खर्च को बढ़ावा दिया है। बढ़ता सैन्य व्यय यह संकेत देता है कि वर्तमान

वैश्विक वातावरण में अविश्वास, युद्ध की आशंका और सामरिक प्रतिस्पर्धा लगातार बढ़ रही है।

बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था का उदय

बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था आधुनिक अंतरराष्ट्रीय राजनीति की वह अवस्था है, जिसमें शक्ति किसी एक महाशक्ति या सीमित गुट के नियंत्रण में नहीं रहती, बल्कि अनेक देशों, क्षेत्रीय संगठनों और आर्थिक समूहों में विभाजित हो जाती है। शीतयुद्ध काल में विश्व दो प्रमुख शक्ति–केंद्रों – अमेरिका और सोवियत संघ के बीच बँटा हुआ था। सोवियत संघ के विघटन के बाद अमेरिका–प्रधान एकध्रुवीय व्यवस्था का प्रभाव बढ़ा, परंतु वर्तमान समय में यह स्थिति बदल रही है। चीन की आर्थिक क्षमता, रूस की सामरिक सक्रियता, भारत की उभरती भूमिका, यूरोपीय संघ की संस्थागत शक्ति तथा पश्चिम एशिया और एशिया की क्षेत्रीय शक्तियों ने विश्व–राजनीति को अधिक संतुलित और प्रतिस्पर्धात्मक बना दिया है।

बहुध्रुवीयता का सबसे स्पष्ट रूप वैश्विक दक्षिण के उभार में दिखाई देता है। ब्रिक्स जैसे मंच अब केवल आर्थिक सहयोग तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं, व्यापार व्यवस्था, ऊर्जा–सुरक्षा और वैश्विक शासन में अधिक न्यायपूर्ण प्रतिनिधित्व की माँग कर रहे हैं। ब्रिक्स का विस्तार यह संकेत देता है कि विकासशील और उभरते हुए देश पश्चिम–केंद्रित व्यवस्था के विकल्प की तलाश में हैं। इसके माध्यम से वे अपनी सामूहिक आवाज को मजबूत करना चाहते हैं और वैश्विक निर्णय–प्रक्रिया में अधिक प्रभाव प्राप्त करना चाहते हैं।

फिर भी बहुध्रुवीय व्यवस्था को केवल सकारात्मक परिवर्तन के रूप में नहीं देखा जा सकता। जहाँ यह व्यवस्था छोटे और मध्यम देशों को कूटनीतिक अवसर देती है, वहीं अनेक शक्ति–केंद्रों के कारण प्रतिस्पर्धा, अविश्वास और टकराव की संभावना भी बढ़ जाती है। दक्षिण चीन सागर, ताइवान, यूक्रेन, पश्चिम एशिया और हिंद–प्रशांत क्षेत्र में चल रहे तनाव इस बात को स्पष्ट करते हैं कि नई विश्व–व्यवस्था स्थिरता के साथ–साथ अस्थिरता भी उत्पन्न कर सकती है। अमिताव आचार्य के अनुसार अमेरिकी प्रभुत्व वाली विश्व–व्यवस्था अब अधिक विकेंद्रित और क्षेत्रीय स्वरूप ग्रहण कर रही है। इसलिए बहुध्रुवीयता का सही मूल्यांकन तभी संभव है, जब इसे शक्ति–संतुलन, वैश्विक दक्षिण की भूमिका और अंतरराष्ट्रीय सुरक्षा की बदलती चुनौतियों के संदर्भ में समझा जाए।

प्रमुख शक्तियों का सैन्य व्यय और शक्ति–संतुलन

बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था में सैन्य व्यय शक्ति–संतुलन को समझने का एक महत्त्वपूर्ण आधार है। किसी देश का रक्षा–व्यय यह संकेत देता है कि वह अपनी सुरक्षा, सामरिक प्रभाव और अंतरराष्ट्रीय स्थिति को कितना महत्त्व दे रहा है। वर्ष 2025 में सबसे अधिक सैन्य व्यय करने वाले देशों में अमेरिका, चीन, रूस, जर्मनी और भारत प्रमुख रहे। इन पाँच देशों ने मिलकर विश्व सैन्य व्यय का लगभग 58 प्रतिशत हिस्सा खर्च किया, जिससे स्पष्ट होता है कि वैश्विक सैन्य शक्ति कुछ प्रमुख देशों के आसपास केंद्रित है।

तालिका 2: *वर्ष 2025 में सबसे अधिक सैन्य व्यय करने वाले पाँच देश*

क्रम संख्या	देश	सैन्य व्यय 2025	वैश्विक हिस्सेदारी
1	अमेरिका	954 अरब अमेरिकी डॉलर	लगभग 33.0 प्रतिशत
2	चीन	336 अरब अमेरिकी डॉलर	लगभग 11.6 प्रतिशत
3	रूस	190 अरब अमेरिकी डॉलर	लगभग 6.6 प्रतिशत
4	जर्मनी	114 अरब अमेरिकी डॉलर	लगभग 3.9 प्रतिशत
5	भारत	92.1 अरब अमेरिकी डॉलर	लगभग 3.2 प्रतिशत

स्रोतः स्टॉकहोम अंतरराष्ट्रीय शांति अनुसंधान संस्थान, विश्व सैन्य व्यय की प्रवृत्तियाँ, 2025

इस तालिका से स्पष्ट होता है कि अमेरिका अभी भी विश्व का सबसे बड़ा सैन्य व्यय करने वाला देश है। उसकी वैश्विक हिस्सेदारी लगभग एक–तिहाई है, जिससे यह सिद्ध होता है कि अमेरिका की सैन्य पहुँच, हथियार–क्षमता और सामरिक प्रभाव अभी भी अत्यधिक व्यापक है। चीन दूसरे स्थान पर है और उसका सैन्य व्यय उसके बढ़ते आर्थिक प्रभाव, समुद्री विस्तार, तकनीकी आधुनिकीकरण और एशिया–प्रशांत क्षेत्र में बढ़ती भूमिका को दर्शाता है। रूस का तीसरे स्थान पर होना यह बताता है कि यूक्रेन युद्ध और पश्चिमी देशों से तनाव ने उसकी रक्षा–नीति को और अधिक सैन्य–केंद्रित बना दिया है। जर्मनी का चौथे स्थान पर पहुँचना यूरोप की बदलती सुरक्षा–चिंता को दिखाता है। रूस–यूक्रेन युद्ध के बाद यूरोपीय देशों ने अपनी रक्षा तैयारी को अधिक गंभीरता से लेना शुरू किया है। भारत का पाँचवें स्थान पर होना दक्षिण एशिया और हिंद–प्रशांत क्षेत्र में उसकी सामरिक भूमिका को दर्शाता है। भारत के लिए चीन और पाकिस्तान से जुड़ी सुरक्षा चुनौतियाँ, समुद्री सुरक्षा और सीमाई रक्षा प्रमुख कारण हैं। इस प्रकार तालिका यह सिद्ध करती है कि बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था में शक्ति–संतुलन केवल कूटनीति या अर्थव्यवस्था से निर्धारित नहीं होता, बल्कि सैन्य क्षमता भी उसका महत्त्वपूर्ण आधार है। प्रमुख शक्तियों का बढ़ता सैन्य व्यय अंतरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा, क्षेत्रीय तनाव और सुरक्षा–संबंधी अविश्वास को दर्शाता है।

अमेरिका–चीन प्रतिस्पर्धा और नई भू–राजनीति

वर्तमान वैश्विक भू–राजनीति में अमेरिका–चीन प्रतिस्पर्धा सबसे महत्त्वपूर्ण शक्ति–संघर्षों में से एक है। अमेरिका अभी भी सैन्य, वित्तीय, तकनीकी और संस्थागत रूप से अत्यंत प्रभावशाली है, परंतु चीन ने उत्पादन, व्यापार, प्रौद्योगिकी, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, 5जी/6जी, समुद्री विस्तार और बुनियादी ढाँचा निवेश के माध्यम से अपनी वैश्विक भूमिका को मजबूत किया है। बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव चीन की आर्थिक भू–राजनीति का प्रमुख उदाहरण है, जिसके माध्यम से वह एशिया, अफ्रीका और यूरोप में परिवहन, बंदरगाह, ऊर्जा और व्यापारिक ढाँचों पर प्रभाव बढ़ा रहा है।

अमेरिका चीन को केवल आर्थिक प्रतिस्पर्धी नहीं, बल्कि रणनीतिक चुनौती के रूप में देखता है। ताइवान, दक्षिण चीन सागर, सेमीकंडक्टर तकनीक, साइबर सुरक्षा और हिंद–प्रशांत क्षेत्र इस प्रतिस्पर्धा के प्रमुख बिंदु हैं। क्वाड, ऑकस और इंडो–पैसिफिक रणनीति जैसी व्यवस्थाएँ

इसी शक्ति–संतुलन की अभिव्यक्ति हैं। भारत इस प्रतिस्पर्धा में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है, क्योंकि वह चीन से सीमा–विवाद भी रखता है और अमेरिका के साथ रणनीतिक सहयोग भी बढ़ा रहा है। फिर भी भारत किसी एक गुट में पूर्ण रूप से शामिल होने के बजाय "रणनीतिक स्वायत्तता" की नीति अपनाता है।

परमाणु अप्रसार व्यवस्थाः सिद्धांत और व्यवहार

परमाणु हथियार वैश्विक सुरक्षा के सबसे खतरनाक आयामों में से एक हैं। परमाणु अप्रसार संधि अर्थात् एन.पी.टी. का मुख्य उद्देश्य परमाणु हथियारों के प्रसार को रोकना, परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग को बढ़ावा देना और परमाणु निरस्त्रीकरण की दिशा में कार्य करना है। संयुक्त राष्ट्र निशस्त्रीकरण कार्यालय के अनुसार, एन.पी.टी. के अंतर्गत अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी द्वारा सुरक्षा उपायों की व्यवस्था की गई है। इन उपायों के माध्यम से सदस्य देशों के परमाणु कार्यक्रमों की निगरानी और सत्यापन किया जाता है, ताकि परमाणु ऊर्जा का उपयोग सैन्य उद्देश्यों के बजाय शांतिपूर्ण कार्यों के लिए किया जा सके। परंतु परमाणु अप्रसार व्यवस्था में कई विरोधाभास दिखाई देते हैं। पहला, पाँच मान्यता प्राप्त परमाणु शक्तियाँ – अमेरिका, रूस, चीन, ब्रिटेन और फ्रांस अपने परमाणु हथियारों को राष्ट्रीय सुरक्षा का आधार मानती हैं, जबकि वे अन्य देशों से परमाणु हथियार विकसित न करने की अपेक्षा करती हैं। दूसरा, भारत, पाकिस्तान और उत्तर कोरिया एन.पी.टी. के बाहर परमाणु शक्ति के रूप में मौजूद हैं। तीसरा, ईरान का परमाणु कार्यक्रम लंबे समय से अंतरराष्ट्रीय विवाद का विषय रहा है। अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी ईरान में निगरानी और सत्यापन से संबंधित विशेष रिपोर्टें जारी करती रही है, जो यह दिखाती हैं कि परमाणु पारदर्शिता आज भी वैश्विक सुरक्षा का संवेदनशील प्रश्न बनी हुई है।

स्टॉकहोम अंतरराष्ट्रीय शांति अनुसंधान संस्थान के 2026 के आँकड़ों के अनुसार, जनवरी 2026 में विश्व में अनुमानित 12,187 परमाणु आयुध–शीर्ष मौजूद थे, जिनमें से लगभग 9,745 संभावित सैन्य उपयोग के लिए भंडारित रखे गए थे। यह स्थिति स्पष्ट करती है कि परमाणु हथियारों की संख्या में कमी के बावजूद उनका रणनीतिक महत्त्व कम नहीं हुआ है। स्कॉट सागन ने परमाणु हथियारों के निर्माण के तीन प्रमुख कारण बताए हैं – सुरक्षा, घरेलू राजनीति और प्रतिष्ठा। यह विश्लेषण आज भी उपयोगी है, क्योंकि अनेक देश परमाणु क्षमता को केवल सुरक्षा का साधन नहीं मानते, बल्कि इसे राष्ट्रीय गौरव, सामरिक शक्ति और अंतरराष्ट्रीय प्रतिष्ठा से भी जोड़ते हैं।

वैश्विक परमाणु हथियारों की स्थिति

परमाणु हथियार वर्तमान वैश्विक सुरक्षा व्यवस्था की सबसे गंभीर चुनौतियों में से एक हैं। बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था में जब महाशक्तियों के बीच प्रतिस्पर्धा बढ़ती है, तो परमाणु हथियार केवल रक्षा के साधन नहीं रहते, बल्कि शक्ति–प्रदर्शन, भय–निरोध और सामरिक दबाव के साधन भी बन जाते हैं। इसलिए परमाणु अप्रसार का प्रश्न आज पहले से अधिक महत्त्वपूर्ण हो गया है।

तालिका 3: *वैश्विक परमाणु हथियारों की स्थिति, जनवरी 2026*

क्रम संख्या	परमाणु स्थिति	अनुमानित संख्या
1	कुल वैश्विक परमाणु वारहेड	12,187
2	संभावित सैन्य उपयोग हेतु भंडारित वारहेड	9,745
3	मिसाइलों और विमानों पर तैनात वारहेड	4,012
4	उच्च परिचालन सतर्कता पर रखे गए वारहेड	2,100—2,200
5	परमाणु हथियार संपन्न देश	9 देश

स्रोतः स्टॉकहोम अंतरराष्ट्रीय शांति अनुसंधान संस्थान, एस.आई.पी.आर.आई. ईयरबुक 2026ः वर्ल्ड न्यूक्लियर फोर्सेज।

इस तालिका से स्पष्ट होता है कि विश्व में परमाणु हथियारों की संख्या आज भी बहुत अधिक है। जनवरी 2026 में कुल अनुमानित 12,187 परमाणु वारहेड मौजूद थे। इनमें से 9,745 वारहेड ऐसे थे जिन्हें संभावित सैन्य उपयोग के लिए भंडारित रखा गया था। इसका अर्थ है कि बड़ी संख्या में परमाणु हथियार केवल ऐतिहासिक अवशेष नहीं हैं, बल्कि वे आज भी सक्रिय सुरक्षा—नीति का हिस्सा बने हुए हैं। तालिका में 4,012 वारहेड मिसाइलों और विमानों पर तैनात बताए गए हैं। यह स्थिति परमाणु जोखिम को और गंभीर बनाती है, क्योंकि तैनात हथियार संकट की स्थिति में शीघ्र उपयोग की क्षमता रखते हैं। इसके अतिरिक्त 2,100 से 2,200 वारहेड उच्च परिचालन सतर्कता की अवस्था में रखे गए हैं। उच्च सतर्कता का अर्थ है कि ये हथियार कम समय में छोड़े जा सकते हैं। ऐसी स्थिति गलत सूचना, तकनीकी गलती या राजनीतिक तनाव के समय दुर्घटनात्मक संघर्ष की आशंका बढ़ा सकती है।

विश्व में नौ देश परमाणु हथियार संपन्न माने जाते हैं। इससे स्पष्ट है कि परमाणु अप्रसार व्यवस्था अभी पूर्ण रूप से सफल नहीं हो पाई है। परमाणु हथियारों का आधुनिकीकरण, महाशक्तियों के बीच अविश्वास और क्षेत्रीय संघर्ष परमाणु सुरक्षा को और जटिल बनाते हैं। इसलिए तालिका यह सिद्ध करती है कि वैश्विक शांति के लिए केवल परमाणु हथियारों की संख्या घटाना पर्याप्त नहीं है, बल्कि परमाणु निरस्त्रीकरण, पारदर्शिता, नियंत्रण—व्यवस्था और अंतरराष्ट्रीय विश्वास—निर्माण भी आवश्यक हैं।

परमाणु निरोध और सुरक्षा दुविधा

परमाणु हथियारों के पक्ष में यह तर्क दिया जाता है कि वे युद्ध को रोकते हैं, क्योंकि परमाणु युद्ध में दोनों पक्षों के विनाश की संभावना होती है। इसे "deterrence" या निरोध कहा जाता है। थॉमस शेलिंग ने परमाणु निरोध को रणनीतिक दबाव और विश्वसनीय धमकी से जोड़ा था। केनेथ वाल्ट्ज ने तर्क दिया था कि परमाणु हथियारों का सीमित प्रसार कभी—कभी स्थिरता भी ला सकता है, क्योंकि वे बड़े युद्ध की लागत बहुत बढ़ा देते हैं। इसके विपरीत स्कॉट सागन और अन्य विद्वान मानते हैं कि परमाणु हथियारों का प्रसार दुर्घटना, गलत आकलन, आतंकवादी जोखिम और सैन्य नियंत्रण की विफलता जैसी समस्याएँ उत्पन्न कर

सकता है। आज यह चिंता और बढ़ गई है, क्योंकि साइबर हमले, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और स्वचालित हथियार प्रणालियाँ परमाणु कमांड और नियंत्रण को अधिक जटिल बना सकती हैं। यदि किसी संकट में गलत सूचना, तकनीकी त्रुटि या गलत अनुमान हो जाए, तो परमाणु संघर्ष का खतरा बढ़ सकता है।

संयुक्त राष्ट्र और वैश्विक शासन की सीमाएँ

संयुक्त राष्ट्र की स्थापना अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा बनाए रखने के उद्देश्य से हुई थी, परंतु समकालीन संकटों ने इसकी सीमाओं को उजागर किया है। सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यों को वीटो अधिकार प्राप्त है, जिसके कारण कई बार गंभीर मानवीय संकटों और युद्धों पर निर्णायक कार्रवाई नहीं हो पाती। यूक्रेन युद्ध में रूस और पश्चिमी देशों के टकराव ने संयुक्त राष्ट्र की क्षमता को सीमित किया। गाजा संकट में भी सुरक्षा परिषद के भीतर गहरे मतभेद दिखाई दिए। वैश्विक शासन की समस्या केवल संयुक्त राष्ट्र तक सीमित नहीं है। विश्व व्यापार संगठन, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक और अन्य संस्थाओं पर भी यह आरोप लगाया जाता है कि वे वैश्विक दक्षिण की अपेक्षाओं का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं करतीं। इसलिए भारत, ब्राजील, दक्षिण अफ्रीका और अन्य देश संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सुधार की माँग करते हैं। यदि अंतरराष्ट्रीय संस्थाएँ नई बहुध्रुवीय वास्तविकता के अनुसार नहीं बदलतीं, तो उनकी वैधता और प्रभावशीलता पर प्रश्न और गहरा होगा।

भारत की भूमिका और रणनीतिक स्वायत्तता

भारत वर्तमान बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था में एक महत्त्वपूर्ण शक्ति के रूप में उभर रहा है। भारत की स्थिति विशेष है, क्योंकि वह एक ओर हिंद महासागर और इंडो–पैसिफिक सुरक्षा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है, वहीं दूसरी ओर वैश्विक दक्षिण की आवाज भी उठाता है। भारत क्वाड का सदस्य है, अमेरिका के साथ रक्षा और तकनीकी सहयोग बढ़ा रहा है, रूस से ऐतिहासिक रक्षा संबंध बनाए हुए है, ब्रिक्स और शंघाई सहयोग संगठन में सक्रिय है और पश्चिम एशिया के देशों के साथ ऊर्जा व प्रवासी भारतीय हितों को भी संतुलित करता है। भारत की परमाणु नीति "न्यूनतम विश्वसनीय प्रतिरोध" और "पहले उपयोग न करने" की अवधारणा पर आधारित मानी जाती है। भारत एन.पी.टी. का हस्ताक्षरकर्ता नहीं है, क्योंकि भारत इसे भेदभावपूर्ण संधि मानता रहा है। भारत का तर्क है कि परमाणु अप्रसार व्यवस्था तभी न्यायपूर्ण हो सकती है जब परमाणु शक्तियाँ वास्तविक निरस्त्रीकरण की दिशा में ईमानदार कदम उठाएँ। भारत की विदेश नीति इसलिए संतुलन, स्वायत्तता और बहुपक्षीय सहयोग के बीच चलती है।

निष्कर्ष

वर्तमान वैश्विक भू–राजनीति शक्ति–संतुलन, युद्ध, तकनीक, ऊर्जा, अर्थव्यवस्था और परमाणु सुरक्षा के जटिल अंतर्संबंधों से निर्मित हो रही है। समकालीन युद्धों ने दिखाया है कि किसी भी क्षेत्रीय संघर्ष का प्रभाव पूरी दुनिया पर पड़ सकता है। रूस–यूक्रेन युद्ध ने यूरोप की सुरक्षा, ऊर्जा बाजार और खाद्यान्न आपूर्ति को प्रभावित किया। गाजा संकट ने मानव–सुरक्षा और अंतरराष्ट्रीय कानून की सीमाओं को सामने रखा। अमेरिका–चीन प्रतिस्पर्धा ने तकनीकी

और समुद्री सुरक्षा को वैश्विक राजनीति के केंद्र में ला दिया। बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था ने पश्चिम–केंद्रित शक्ति–संरचना को चुनौती दी है, परंतु यह व्यवस्था अपने साथ नई अस्थिरता भी लेकर आई है। ब्रिक्स का विस्तार, वैश्विक दक्षिण का उभार और भारत जैसी शक्तियों की सक्रियता इस परिवर्तन को स्पष्ट करती है। परमाणु अप्रसार व्यवस्था आज भी आवश्यक है, लेकिन परमाणु हथियारों का आधुनिकीकरण, एन.पी.टी. की असमानता, ईरान और उत्तर कोरिया जैसे प्रश्न तथा अमेरिका–रूस–चीन की परमाणु प्रतिस्पर्धा इसे कमजोर करते हैं।

अंततः वैश्विक सुरक्षा के लिए केवल सैन्य शक्ति पर्याप्त नहीं है। न्यायपूर्ण बहुपक्षीय व्यवस्था, परमाणु निरस्त्रीकरण, अंतरराष्ट्रीय कानून का सम्मान, मानवीय सुरक्षा, तकनीकी नियंत्रण और संस्थागत सुधार आवश्यक हैं। यदि विश्व–व्यवस्था केवल शक्ति–प्रतिस्पर्धा पर आधारित रहेगी, तो संघर्ष और अविश्वास बढ़ेंगे; लेकिन यदि संवाद, सहयोग और संतुलित बहुध्रुवीयता को आधार बनाया जाए, तो वैश्विक शांति और सुरक्षा की दिशा में ठोस प्रगति संभव है।

संदर्भ–सूची

1. बुजान, बैरी एवं वेवर, ओले. (2003). रीजनज एंड पावर्सः द स्ट्रक्चर ऑफ इंटरनेशनल सिक्योरिटी. कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज।
2. बेलिस, जॉन, स्मिथ, स्टीव एवं ओवेन्स, पैट्रिशिया. (2020). द ग्लोबलाइजेशन ऑफ वर्ल्ड पॉलिटिक्सः एन इंट्रोडक्शन टू इंटरनेशनल रिलेशंस. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड।
3. केओहेन, रॉबर्ट ओ. एवं नाई, जोसेफ एस. (1977). पावर एंड इंटरडिपेंडेंसः वर्ल्ड पॉलिटिक्स इन ट्रांजिशन. लिटिल, ब्राउन एंड कंपनी, बोस्टन।
4. किसिंजर, हेनरी. (2014). वर्ल्ड ऑर्डर. पेंगुइन प्रेस, न्यूयॉर्क।
5. मियरशाइमर, जॉन जे. (2001). द ट्रैजेडी ऑफ ग्रेट पावर पॉलिटिक्स. डब्ल्यू. डब्ल्यू. नॉर्टन एंड कंपनी, न्यूयॉर्क।
6. मियरशाइमर, जॉन जे. (2014). व्हाई द यूक्रेन क्राइसिस इज द वेस्ट्स फॉल्टः द लिबरल डिल्यूशंस दैट प्रोवोक्ड पुतिन. फॉरेन अफेयर्स, 93(5), पृ० 77–89।
7. सागन, स्कॉट डी. (1996–97). व्हाई डू स्टेट्स बिल्ड न्यूक्लियर वेपन्स? थ्री मॉडल्स इन सर्च ऑफ ए बॉम्ब. इंटरनेशनल सिक्योरिटी, 21(3), पृ० 54–86।
8. स्टॉकहोम इंटरनेशनल पीस रिसर्च इंस्टीट्यूट. (2026). एस.आई.पी.आर.आई. ईयरबुक 2026ः आर्मामेंट्स, डिसआर्मामेंट एंड इंटरनेशनल सिक्योरिटी. एस.आई.पी.आर.आई., स्टॉकहोम।
9. स्टॉकहोम इंटरनेशनल पीस रिसर्च इंस्टीट्यूट. (2026). ट्रेंड्स इन वर्ल्ड मिलिटरी एक्सपेंडिचर, 2025. एस.आई.पी.आर.आई., स्टॉकहोम।
10. वाल्ट्ज, केनेथ एन. (1981). द स्प्रेड ऑफ न्यूक्लियर वेपन्सः मोर मे बी बेटर. एडेल्फी पेपर्स, 21(171), पृ० 1–32।
11. जर्विस, रॉबर्ट. (1978). कोऑपरेशन अंडर द सिक्योरिटी डिलेमा. वर्ल्ड पॉलिटिक्स, 30(2), पृ० 167–214।

12. नाई, जोसेफ एस. (2004). सॉफ्ट पावरः द मीन्स टू सक्सेस इन वर्ल्ड पॉलिटिक्स. पब्लिक अफेयर्स, न्यूयॉर्क।
13. अंतरराष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी. (2026). मॉनिटरिंग एंड वेरिफिकेशन इन ईरान. आई.ए.ई.ए., विएना।
14. आइकेनबेरी, जी. जॉन. (2018). द एंड ऑफ लिबरल इंटरनेशनल ऑर्डर? इंटरनेशनल अफेयर्स, 94(1), पृ० 7–23।
15. आचार्य, अमितव. (2014). द एंड ऑफ अमेरिकन वर्ल्ड ऑर्डर. पॉलिटी प्रेस, कैम्ब्रिज।
16. फ्रीडमैन, लॉरेंस. (2022). कमांडः द पॉलिटिक्स ऑफ मिलिटरी ऑपरेशंस फ्रॉम कोरिया टू यूक्रेन. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड।